इकाई 15 विश्रुतचरितम् परिचय (कथावस्तु, पात्रचित्रण, वैशिष्ट्य आदि)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 आचार्य दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

15.3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु

15.4 विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण

- 15.4.1 पुण्यवर्मा
- 15.4.2 अनन्तवर्मा
- 15.4.3 नालीजङ्घ
- 15.4.4 मंत्री वसुरक्षित
- 15.4.5 सेवक विहारभद्र

15.5 विश्रुतचरितम् का वैशिष्ट्य

15.6 सारांश

15.7 शब्दावली

15.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- दण्डी के जीवनवृत्त एवं उनकी रचना से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् की कथावस्तु से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् के मुख्य पात्रों से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् में प्रयुक्त साहित्यिक शब्दावली से परिचित हो जायेंगे।

15.1 प्रस्तावना

संस्कृत काव्य के दो प्रमुख भेद माने गये हैं दृश्य तथा श्रव्य काव्य। जिसे देखा जा सके अथवा जिसका मंचन किया जा सके, उसे दृश्य काव्य कहते हैं। सम्पूर्ण नाट्यसाहित्य दृश्य काव्य के अन्तर्गत आता है। श्रव्य काव्य के पुनः तीन भेद माने गये है पद्य, गद्य एवं मिश्र। छन्दोबद्ध रचना पद्य तथा छन्दों के बन्धन से मुक्त रचना गद्य कही जाती है। मिश्र काव्य के अन्तर्गत चम्पूकाव्य आते हैं। इनमें गद्य तथा पद्य दोनों का प्रयोग किया जाता है।

आचार्य दण्डी संस्कृत के प्रथम गद्यकार है, क्योंकि सबसे प्राचीन कृतियाँ इनकी ही उपलब्ध होती है। इनकी एक रचना का नाम दशकुमारचरितम् है। दशकुमारचरितम् दण्डी का प्रसिद्ध गद्य काव्य है। ग्रन्थ सरलता, सरसता तथा कौतूहलपूर्णता के लिए विशेष रूप से विख्यात् है। यह तो इसके नाम से ही प्रकट है कि इसमे दशकुमारों के चरित का संकलन किया गया है। इसका वर्तमान उपलब्ध स्वरूप तीन भागों में विभक्त है–1.पूर्वपीठिका–इसके अन्तर्गत पाँच उच्छवास है। 2.उत्तरपीठिका, 3.इन दोनों के मध्य पुस्तक का मूल भाग है, जिसमें आठ उच्छवासों में आठ कुमारों की कथाएँ वर्णित है। विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् नामक भाग के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।

विश्रुतचरितम् (1–15 परिच्छेद तक) के अन्तर्गत इकाई 15 विश्रुतचरितम् परिचय (कथावस्तु, पात्र चित्रण एवं वैशिष्ट्य) आदि के अन्तर्गत दशकुमारचरितम् (विश्रुतचरितम्) की कथा बृहत्कथा से ली गयी है। बृहत्कथा के नरवाहनदत्त और उसके साथियों के समान ही इसमें भी दस कुमार साहसिक कार्यों के लिए निकलते हैं और वापस मिलने पर उनका वर्णन करते हैं। विश्रुतचरितम् की कथावस्तु का कथानक घटना प्रधान है। विस्मय और रोमांच से भरे पर्यटन और पराक्रम के विवरण इसमें पद–पद पर हैं। कुछ लोग इसे 'धूर्तों के रोमांस' की संज्ञा देते है। छल–कपट, मारकाट, चोरी से ओतप्रोत यह एक सजीव कृति है। व्यंग्य के साथ इसमें समाज का चित्रण किया गया है। दम्भी तपस्वी, कपटी ब्राह्मण, धूर्त कुट्टनी और व्यभिचारिणी स्त्रियों आदि का इसमें खूब उद्घाटन हुआ है। दण्डी का पात्र–चित्रण विशद है। विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण के अर्न्तगत राजा पुण्यवर्मा, अनन्तवर्मा, नालीजङ्घ मंत्री वसुरक्षित, सेवक विहारभद्र का चरित्र चित्रण दर्शाया गया है। विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य के अर्न्तगत रचना–कौशल दर्शनीय हैं।

15.2 आचार्य दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

जीवनवृत्त–

'अवन्तिसुन्दरीकथा' नामक गद्यकाव्य की प्राप्ति से पूर्व दण्डी के जीवन–वृत्तान्त के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं था। इस काव्य के प्रारम्भ में दण्डी ने अपने परिवार के तथा अपने जीवन के वृत्तान्त के सम्बन्ध में कुछ लिखा है। इसके अनुसार दण्डी के पूर्वज नारायण स्वामी के एक पुत्र दामोदर नाम के हुये। दामोदर की 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य के लेखक भारवि से मित्रता थी। ये कांचीनरेश विष्णुवर्धन की राजसभा में आये थे। दामोदर के तीन पुत्र हुए। उनमें मंझले पुत्र का नाम मनोरथ था। मनोरथ के चार पुत्र हुए, जिनमें सबसे छोटे पुत्र का नाम वीरदत्त था। वीरदत्त तथा उनकी पत्नी गौरी दण्डी के माता–पिता थे। ये दोनों ही दण्डी की बाल्यावस्था में स्वर्गवासी हो गये।

दामोदर के पूर्वज पश्चिमोत्तर प्रदेश के आनन्दपुर नामक स्थान पर रहते थे। वहाँ से ये नासिक के अचलपुर नामक स्थान पर आकर बस गये। दामोदर की मैत्री कांची के राजा विष्णुवर्धन से हो गई। परन्तु विष्णुवर्धन के अनाचार से दुखी होकर वे गंगवंशीय राजा दुर्विनीत के यहाँ रहने लगे। तदनन्तर वे कांची के पल्लववंशी राजा सिंहविष्णु के आश्रय में रहे। सिंहविष्णु के राज्यारोहण का समय 575 ई॰ निश्चित किया गया है। इसका पुत्र महेन्द्रवर्मा हुआ। महेन्द्रवर्मा का पुत्र नृसिंहविष्णु नाम से भी प्रसिद्ध हुआ था। इसका राज्य 625–645 ई॰ तक रहा। विवरणों से प्रतीत होता है कि भारवि इस

राजा की राजसभा में रहे थे। अतः भारवि का समय 610–645 ई॰ रहा होगा। दण्डी के प्रपितामह भारवि के मित्र थे, अतः दण्डी का जन्म 650 ई॰ के लगभग हुआ होगा।

दण्डी की बाल्यावस्था में ही उनके माता–पिता की मृत्यु हो गई थी। इस समय कांची में महान् विप्लव हुआ और इस नगरी का महान विनाश हुआ। उस समय दण्डी इस नगरी को छोड़कर चले गये। वर्षों तक अनेक स्थानों पर भ्रमण करके विद्याध्ययन करते रहे। अन्त में युवा होने पर वे कांची में वापस आये । यहाँ सरस्वती के आदेश से इन्होंने अपने मित्रों को विद्याधर–नरेश राजवाहन की कथा सुनाई, जो कि 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के नाम से प्रसिद्ध है।

जैसा कि पहले कहा गया है कि दण्डी के प्रपितामह दामोदर की भारवि से मित्रता थी। भारवि का सर्वप्रथम उल्लेख चालुक्यवंशी राजा पुलकेशिन, द्वितीय के ऐहोल शिलालेख 634 ई॰ में मिलता है–

येनायोजि न वेष्म स्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेष्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।।

ऐहोल का शिलालेख

विष्णुवर्धन ने जो कि पुलकेशिन द्वितीय का भाई या पुत्र कहा जाता है, आन्ध्र और कलिंग में चालुक्य वंश का राज्य स्थापित किया था। उसका शासन काल 615–633 ई॰ तक रहा। इसकी राजसभा में दण्डी के प्रपितामह दामोदर आये थे। दण्डी को हम इनके 50 वर्ष बाद का रख सकते हैं। अतः दण्डी का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्ध हो सकता है। भारवि या तो पुलकेशिन् के समकालीन रहे होगें, या उससे कुछ पहले हुये होंगे। भारवि कृति 'किरातार्जुनीयम्' पर राजा दुर्विनीत ने जिनके आश्रय में कुछ समय तक दामोदर रहे थे, एक टीका लिखी थी–

किरातार्जुनीये पंचदशसर्गे टीकाकारेण दुर्विनीतमधेयेन।

दण्डी ने 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में भास, सुबन्धु, बाण, मयूर आदि कवियों का उल्लेख किया है, अतः इनको इन सबका उत्तरवर्ती होना चाहिए। यद्यपि बाण और मयूर से इनका समय बहुत बाद का न होकर निकटवर्ती ही होना चाहिये तथा इनकी ग्रन्थ–रचना का काल 675–710 ई॰ का सरलता से माना जा सकता है।

कर्तृत्त्व–

राजशेखर ने शाङ्र्गधर पद्धति में दण्डी की तीन कृतियों का उल्लेख किया है–

त्रयोऽग्नयस्त्रयो देवास्त्रयो वेदास्त्रयो गुणाः।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

दण्डी की यह तीन रचना है–

1. काव्यादर्श
2. दशकुमारचरितम्
3. अवन्तिसुन्दरी कथा

प्रथम दो ग्रन्थों के विषय में सभी विद्वान् एकमत थे, किन्तु तीसरे ग्रन्थ को लेकर उनमें मतभेद था। परन्तु विभिन्न प्रमाणों के आधार पर कालान्तर में 'अवन्तिसुन्दरीकथा' को दण्डी की तृतीय रचना के रूप संस्कृत साहित्य जगत् में सम्मान प्रदान किया गया।

विश्रुतचरितम् (1-15 परिच्छेद तक)

दशकुमारचरितम् दण्डी का प्रसिद्ध गद्य काव्य है। ग्रन्थ सरलता, सरसता तथा कौतूहलपूर्णता के लिए विशेष रूप से विख्यात् है। यह तो इसके नाम से ही प्रकट है कि इसमे दशकुमारों के चरित का संकलन किया गया है। इसका वर्तमान उपलब्ध स्वरूप तीन भागों में विभक्त है–1.पूर्वपीठिका–इसके अन्तर्गत पाँच उच्छवास है। 2. उत्तरपीठिका, 3.इन दोनों के मध्य पुस्तक का मूल भाग है, जिसमें आठ उच्छवासों में आठ कुमारों की कथाएँ वर्णित है। विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।

दशकुमारचरितम् में दसकुमारों की कथाओं का वर्णन प्राप्त होता है। मगध देश में पुष्पुर नामक नगर में राजहंस नामक एक महाप्रतापी राजा राज्य करता था। उसकी पत्नी वसुमती अति गुणवती तथा सुन्दर थी। एक बार राजहंस ने मालवराज मानसार पर आक्रमण किया और उसे पराजित कर दिया। मालवराज ने तब शिव की उपासना की और उनसे दिव्यशक्ति का वरदान प्राप्त किया। इसके पश्चात् उसने राजहंस पर आक्रमण कर, उसे परास्त किया तथा उसके राज्य को अपने अधीन कर लिया। राजहंस ने अपने वृद्ध मंत्रियों–धर्मपाल, पदमोद्भव और सितवर्मा तथा अपने परिवार के साथ विन्ध्याटवी में आश्रय लिया। धर्मपाल के सुमन्त्र, सुमित्र और कामपाल, पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव तथा सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा नामक पुत्र हुए। इनमें से कामपाल, रत्नोद्भव तथा सितवर्मा विदेश चले गए। शेष अपने पिताओं की मृत्यु के पश्चात् मन्त्री बन गए। कुछ समय के पश्चात् वसुमती ने राजवाहन नामक पुत्र को जन्म दिया। राजा के मन्त्री भी इसी बीच पुत्रवान् बने। कामपाल, रत्नोद्भव और सत्यवर्मा के पुत्र भी किसी न किसी प्रकार से राजहंस के पास आ गए। राजा के मित्र प्रहारवर्मा के दो पुत्र उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके (राजा राजहंस) पास लाए गए। इन सभी कुमारों की संख्या दस थी।

15.3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु

विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् नामक भाग के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।कुमार मन्त्रगुप्त के सम्पूर्ण वृतान्त को सुनकर राजवाहन ने अपने मित्रों के साथ मुस्कुराते हुए मन्त्रगुप्त को अभिवादन करते हुए कहा कि महामुनि का चरित्र अत्यंत विलक्षण है, जिसमें आनन्द को प्रदान करने वाले आपके बुद्धि कौशल का स्वरूप देखा गया है। इसके बाद अनेक शास्त्रों के मर्मज्ञ उस विश्रुत से अपना वृत्तान्त सुनाने को राजवाहन ने कहा। विश्रुत ने अपना वृत्तान्त राजवाहन को सुनाते हुए बोला कि हे महाराज! मेरे द्वारा भी घूमते–घूमते विन्ध्यांचल के वन में भूख तथा प्यास से पीड़ित, कष्टों को सहन करने में असमर्थ, किसी कुएँ के समीप लगभग आठ वर्ष का एक बालक देखा गया।' (मुझे देखकर) भयभीत वह (बालक) गद्गद् (रूँधे हुए) स्वर में बोला–'हे महाभाग! आर्य (पूज्य), कष्ट में पड़े हुए मुझ (बालक) की (आपके द्वारा) सहायता की जाय। प्राणों का अपहरण करने वाली प्यास को दूर करने के निमित्त पानी को निकालने (खींचते हुए) एक वृद्ध (पुरुष), जो कि मेरा एक मात्र सहारा था, इसी कुएँ में गिर गया है। उसको (इस कुँए से बाहर) निकालने में मैं समर्थ नहीं हूँ।' इसके अनन्तर मैंने समीप जाकर कुछ लताओं को एकत्र करके उनकी (सहायता से) उस वृद्ध को (कुएँ से) बाहर निकाल कर, बाँस की नली से निकाले हुए जल (तथा) बाण फेकने से जितना ऊँचा जा सकता है, उतने ऊँचे बड़हर के वृक्ष की चोटी से, पत्थर से (पत्थर मारकर) गिराए हुए पाँच छः फलों से, उस बालक की प्राण वृत्ति लौटाकर (उस बालक को होश में

लाकर), वृक्ष के नीचे बैठकर उस वृद्ध से कहा –हे माननीय! यह लड़का कौन है? तथा यह विपत्ति कैसे आ पड़ी?

वृद्ध ने कहा–'महाशय! विदर्भ देश में पुण्यवर्मा नामक एक सर्वगुणसम्पन्न राजा था। उसके मरने के उपरान्त उसका पुत्र अनन्तवर्मा राजगद्दी पर बैठा। वह कला में प्रवीण होने पर भी राजनीति में कुशल नहीं था। दिन–रात विलासिता में निमग्न रहता था। इसलिए उसके मुख्यमंत्री वसुरक्षित ने उसे एक दिन राजनीति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए एकान्त में बहुत उपदेश दिया। उसने मन्त्री की बात मान ली, किन्तु अपने अन्तःपुर में रानियों के समक्ष मन्त्री के उपदेश की चर्चा कर दी। वहाँ विहारभद्र नामक उसके एक महास्वार्थी सेवक ने छिपकर उसकी सब बातें सुन ली। उसने आकर अनन्तवर्मा के सामने बड़ी नम्रता से राजनीति का खण्डन करते हुए, राजा को यथेच्च भोगपरायण होने की सलाह की। कामी राजा पर उसकी चिकनी–चुपड़ी बातों का असर पड़ गया। फिर क्या था, अनन्तवर्मा मन्त्री की अवहेलना करके भोगासक्त हो गया।अनन्तर अश्मक देश के अधिपति वसन्तभानु ने अपने मन्त्री के पुत्र चन्द्रपालित को बहुत से गुप्तचरों तथा सुन्दरी स्त्रियों के साथ अनन्तवर्मा के पास भेज दिया। चन्द्रपालित ने ऐसा माया जाल फैलाया कि अनन्तवर्मा बुरी तरह उसके चक्कर में फँसकर महादुर्व्यसनी हो गया। उसके देखा–देखी नौकर–चाकर, प्रमुख अधिकारी, सामन्त आदि सब के सब कुमार्ग पर चलने लगे। अवसर पाकर अश्मकपति ने अनन्तवर्मा पर आक्रमण कर दिया, जिसमें वह मारा गया।

इस बीच वसुरक्षित कुछ पुराने सेवकों के साथ अनन्तवर्मा के पुत्र इस बालक को और उसकी बड़ी बहन मंजुवादिनी को इनकी माता वसुन्धरा समेत लेकर भाग निकले। दाहज्वर होने के कारण वसुरक्षित मार्ग ही में मर गये। तब सेवकों ने महारानी वसुन्धरा को पुत्र–पुत्री सहित अनन्तवर्मा के सौतेले भाई मित्रवर्मा के पास माहिष्मती नगरी में पहुँचा दिया। मित्रवर्मा दुष्ट है। वह महारानी के पुत्र को मारकर उनके साथ अनुचित सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था इसलिए महारानी मुझे लेकर भागकर यहाँ आ पहुँची। इसके लिए जल निकालने के समय कुएँ में गिर पड़ा। जिस पर आपने अनुग्रह किया। मेरा नाम नालीजंघ है। अब आप ही इस बालक के रक्षक हैं।

तदुपरान्त भास्करवर्मा की माता के सम्बन्ध में पूछने पर नालीजंघ ने कहा–पाटलिपुत्र के व्यापारी वैश्रवण की पुत्री सागरदत्ता में कोसलेन्द्र कुसुमधन्वा से इस कुमार की माता का जन्म हुआ है। यदि ऐसी बात है तो इसकी माता और मेरे पिता के एक ही मातामह है। यह कहकर मैंने उसका सस्नेह आलिंगन किया। उसी समय दैवात् वहाँ आये हुए एक बहेलिये के बाण से मैंने एक हरिण को मारकर आग में पकाकर उन दोनों की तथा अपनी क्षुधा शान्त की। उसी बहेलिये से हमें ज्ञात हुआ कि माहिष्मती में मित्रवर्मा मंजुवादिनी का विवाह प्रचण्डवर्मा से करने की तैयारी कर रहा है। तब मैंने नालीजंघ से कहा–तुम महारानी के पास जाकर एकान्त में उनसे मेरा समाचार बताकर कहना कि 'बालक को बाघ खा गया' ऐसी घोषणा करके आप रोना–पीटना शुरु कर दीजिए। इस पर मित्रवर्मा जब आपकों साँत्वना देने के लिए आये तब आप कहे कि यदि मै पतिव्रता हूँ तो यह माला तुम्हारे लिए तलवार का प्रहार हो जाय। यह कहकर वत्सनाभ नामक विष के साथ जल में डुबोई गई एक माला उसके ऊपर फेंक दे। वह उससे मर जाएगा। तब उस माला को इस औषधि के साथ पुनः जल में डुबोकर अपनी पुत्री को पहना दें। पुत्री नहीं मरेगी। इस घटना से प्रजा आपको पतिव्रता मानकर आप पर बड़ी श्रद्धा करेगी। तब आप प्रचण्डवर्मा को संदेश कहलावे कि वह आकर मंजुवादिनी के साथ पूरा राज्य ले ले। उस समय मैं और राजकुमार भास्करवर्मा

कापालिक साधु के वेश में वहीं श्मशान में निवास करेंगे। पुनः आप (महारानी) नगर के प्रतिष्ठित लोगों से कहें कि विन्ध्यवासिनी देवी ने मुझसे स्वप्न में कहा है–आज से चौथे दिन प्रचण्डवर्मा मर जाएगा। पाँचवें दिन नर्मदा तटवर्ती मेरे मन्दिर में तुम्हारे पुत्र के साथ एक ब्राह्मण कुमार प्रकट होगा। वह इस राज्य का पालन करता हुआ तुम्हारे पुत्र को राजगद्दी पर बैठायेगा। उसके बाद तुम मंजुवादिनी का विवाह उसी ब्राह्मणकुमार के साथ कर देना।

मैंने नालीजंघ से जो योजना बतायी, उसको पूर्णरूप से कार्यान्वित किया गया। मैं और राजकुमार कापालिक वेश में वहीं पहुँच गये। महारानी से भिक्षा लेकर जाते समय नालीजंघ से पूछने पर पता चला कि प्रचण्डवर्मा इस समय राजसभागृह में विद्यमान है। मैं चारण के वेश में प्रचण्डवर्मा के पास पहुँचकर नाना प्रकार के खेलों में उसका मनोरंजन करने लगा। दिनान्त के समय खेल ही खेल में छुरी से उस पर प्रहार करके भाग निकला। आधी रात के समय महारानी का एक नौकर यथानिर्दिष्ट दुर्गादेवी के मन्दिर में कीमती वस्त्र एवं आभूषण रखकर चला गया। मैं और राजकुमार उसी मन्दिर में प्रतिमा के पास एक बिल बनाकर बिल के मुँह पर पत्थर रखकर छिपे हुए थे। उन वस्त्र–आभूषणों को पहनकर हम दोनों उसी बिल के घुस गए। दूसरे दिन प्रातःकाल महारानी मंत्रियों तथा सामन्तों के साथ दुर्गा मन्दिर में आयी। पूजन करने के उपरान्त किवाड़ सटाकर मन्दिर के प्रांगण में सब लोग हाथ जोड़कर खड़े हो गये तथा संकेतानुसार नगाड़ा बजाया जाने लगा। नगाड़े का शब्द सुनकर हम दोनों बिल से बाहर निकलकर लोगों के सामने आये। मैंने सबको सम्बोधित किया–'विन्ध्यवासिनी देवी मेरे द्वारा आप लोगों को आदेश देती हैं कि मैंने व्याघ्री का रूप धारण करके कुमार की रक्षा की। आज से इसे मेरा पुत्र समझो। इसे राजसिंहासन पर बैठाया जाय। इसकी रक्षा के लिए मैंने इस ब्राह्मण कुमार को नियुक्त किया है। इस ब्राह्मण कुमार के साथ मंजुवादिनी का विवाह कर दिया जाय।

यह सुनकर सभी लोग विस्मित एवं प्रमुदित हुए। उसी दिन राजकुमार को राजसिंहासन पर बैठाया गया। मंजुवादिनी का विवाह मेरे साथ हुआ। मैं राज्य–पालन करता हुआ राजकुमार को राजनीति की शिक्षा देने लगा।

अनन्तर मैंने गुप्तचरों द्वारा वसन्तभानु की प्रजाओं में बुद्धिभेद उत्पन्न करके उसको विनष्ट कर विदर्भ देश का पैतृक राज्य भी राजकुमार को प्राप्त करा दिया। कुछ दिनों के उपरान्त अपनी पत्नी मंजुवादिनी को माता के पास छोड़कर आपको ढूँढता हुआ यहाँ आने पर आपके दर्शन से कृतकृत्य हुआ। विश्रुत जानता था कि कुशल सहायकों के बिना राज्यसंचालन सम्भव नहीं। अतः वह नालीजङ्घ के माध्यम से मित्रवर्मा के अमात्य आर्यकेतु, जो कि रानी वसुन्धरा के समान कोसलवंश का था, के मन के भावों को जानने का प्रयास करता है। उसे अपने अनुकूल जानकर अपना सहायक बना लिया। उसकी सहायता से सुचारु रूप से राजकीय कार्यों का निर्बाह करने लगा।

15.4 विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण

दण्डी का पात्र–चित्रण विशद है। उनका रचना–कौशल दर्शनीय हैं। रोचकता के लिए इसमें हास्य का पुट भी दिया गया हैं। कथाओं के क्रम में अवरोध नहीं है। व्याकरण और भाषा की दृष्टि से दण्डी को संस्कृत गद्यशैली का आचार्य माना जाता है। उन्होंने अपने वर्णनों में सरल और मनोरम वैदर्भी रीति को अपनाया है। छोटे–छोटे वाक्य, अर्थ की स्पष्टता, सुन्दर शब्द–विन्यास, मौलिक कल्पनाएँ आदि उनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ है।

15.4.1 पुण्यवर्मा

विदर्भ नाम का जनपद देश है उसमें भोजवंश का भूषण राजा पुण्यवर्मा रहता था जो पवित्र कीर्ति वाला अर्थात् उसका यश गुणों के कारण सर्वत्र व्याप्त था। वह विद्वान्, महाशक्तिशाली, बन्धु–बान्धवों तथा सेवकों पर कृपा करने वाला, प्रजापालक, मनु स्मृति के प्रणेता महाराज मनु के द्वारा बताए गये मार्ग पर चलने वाला और प्रजा जनों से भी मनु प्रतिपादिक नियम का पालन कराने वाला, उदार ,दानी तथा सम्पूर्ण मानवीय सद्गुणों से सम्पन्न था। वह शास्त्र को प्रमाण मानने वाला, जो काम अपने से हो सके, सामान्य जनता के लिए हितकर हो तथा न्याय युक्त हो ऐसे कामों को करने वाला, विद्वानों का सम्मान करने वाला, सेवकों पर प्रभाव रखने वाला, भाई–बन्धुओं को ऊँचा उठाने वाला, शत्रुओं का दमन करने वाला, जिन बातों से अपना कोई प्रयोजन न हो उनको न सुनने वाला, गुणों से कभी भी तृप्त न होने वाला, कलाओं में अत्यधिक निपुण, धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के अत्यधिक निकट रहने वाला, थोड़ी सी भी उसकी भलाई की जाने पर प्रचुर–प्रत्युपकार करने वाला, कोश तथा वाहन की देखरेख करने वाला, अपने सभी कार्याध्यक्षों पर सावधानी पूर्वक दृष्टि रखने वाला, अनुरूप पुरस्कार तथा सम्मान द्वारा कार्यकर्त्ताओं का उत्साह बढ़ाने वाला, दैवीय तथा मानुषी आपत्तियों को तुरन्त ही शान्त अथवा दूर करने वाला, छः गुणों (सन्धि विग्रह, यान, आसन, आश्रय तथा द्वैधीभाव) का विधिवत् पालन करने में निपुण, मनु द्वारा बतलाये गये चातुर्वर्ण्य (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) के धर्मों के पालन कराने वाला, पवित्र यश वाला था।

15.4.2 अनन्तवर्मा

अनन्तवर्मा पुण्यवर्मा का पुत्र था वह राजनीति से सर्वथा विमुख रहने वाला था। उसकी इस विमुखता का और भोग विलासों के प्रति उसकी आसक्ति का लाभ उठाकर अश्मकराज वसन्तभानु, जो कि विदर्भ शासन के अधीन रहने वाला एक सामन्त था। राजा अनन्तवर्मा जिस–जिस व्यसन को प्रारम्भ करता वह उसका गुण रूप में वर्णन करता था। वह किसी के दोष को जानने के लिए प्रयत्न नहीं करता था। विभिन्न विभागों के अध्यक्ष इस स्थिति का लाभ उठाने लगे। वे कर आदि से प्राप्त धनों को राजकीय कोश में जमा न कराकर, स्वयं उनका उपभोग करने लगे। इस प्रकार धीरे–धीरे आय के सभी द्वार नष्ट हो गए।

स्वामी धूर्तजनों के वश में रहने वाला था, अतः व्यय के विभिन्न मार्ग प्रतिदिन बढ़ने लगे। सामन्त, नगर एवं जनपदों के प्रमुख अधिकारी आदि सभी राजा के समान आचरण करने वाले थे अतः राजा अनन्वर्मा उन्हें उनकी पत्नियों सहित मद्यपान आदि की सभाओं में बुलाने लगा। उन सभाओं में सभी अपनी–अपनी मर्यादाओं को भूलकर यथेच्छ व्यवहार करते थे। राजा भी अनेक बहानों से उनकी पत्नियों के साथ दुराचार करता था। राजा की स्त्रियों में किसी भी प्रकार का भय लगभग समाप्त हो चुका था। अतः दूषित चरित्रवाली स्त्रियाँ स्वामी से भिन्न पुरुषों से सम्बन्ध स्थापित करने में किसी भी प्रकार का संकोच अनुभव नहीं करती थी। सामन्त इत्यादि भी निर्भयी होकर उनके साथ सुखपूर्वक रहते थे। सभी कुलीन स्त्रियाँ लम्पट पुरुषों में रुचि रखने वाली बन गई थीं। इस कारण से उनकी अवहेलना कर जारगणों की बातों को ही सुनती थीं। जिन घरों में स्वामी अपनी स्त्रियों के इस दुराचार को सहन नहीं कर पा रहे थे, उनके घरों में इस बात को लेकर विवाद होने लगे। उसके राज्य में शासन नाम की कोई व्यवस्था नहीं रह गई थी। बलवान् दुर्बलों को मारने लगे थे। पौर आदि धनवानों

के धनों को चुराने लगे। किसी के मन में दण्ड का भय नहीं रह गया था। अतः पापकर्म के अनेक मार्ग प्रचलित हो गए थे। बन्धुओं के वध, धन के छिन्न भिन्न हो जाने, वध तथा कारावास आदि से त्रस्त प्रजा गला फाड़–फाड़कर रोने लगीं। राजा से अपेक्षा की जाती है कि वह दण्ड–प्रयोग में यम की भाँति व्यवहार करे और देश–काल, आयु, स्थान, लिङ्ग और अपराध के प्रकृति आदि को देखते हुए दण्ड का प्रयोग करें। परन्तु अनन्तवर्मा बिना सोचे–समझे दण्ड का प्रयोग करने लगा था। उसके इस प्रकार के व्यवहार से प्रजा में भय और क्रोध व्याप्त हो गया। धनाभाव से ग्रस्त परिवार लोभग्रस्त होने लगे थे। राजा के व्यवहार से अपमानित तेजस्वी लोग प्रतीकार की भावना से कार्य करने लगे थे।

15.4.3 नालीजङ्घ

नालीजङ्घ प्रधान पात्र न होते हुए भी विश्रुतचरितम् का अभिन्न अङ्ग है। वह एक निष्ठावान् एवं सद्विचारों वाला सेवक था। वसुरक्षित की मार्ग में ही अकाल मृत्यु हो जाने पर वही अन्य विश्वस्त पुरुषों के साथ मिलकर देवी वसुन्धरा तथा उसके बच्चों को मित्रवर्मा के पास सुरक्षित पहुँचाता है। रानी वसुन्धरा को उस पर अगाध विश्वास था। मित्रवर्मा से अपने पुत्र को बचाने के लिए वह नालीजङ्घ के साथ उसे राजमहल से बाहर गुप्त रूप से भेज देती है और कहती है कि यहाँ से कहीं दूर जाकर सावधानी पूर्वक रहो। नालीजङ्घ रानी वसुन्धरा के विश्वास की रक्षा करता है और बालक भास्करवर्मा को लेकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर उसके प्राणों की रक्षा के निमित्त भटकता रहता है। इसी प्रक्रिया में वह विन्ध्याट्वी के वन में भास्करवर्मा की प्यास बुझाने के लिए जल निकालता हुआ कुएँ में गिर पड़ता है। विश्रुत उसे कुएँ से निकालता है और उन दोनों की क्षुधातृप्ति की व्यवस्था कर नालीजङ्घ से भास्कर वर्मा के विषय में पूछता है। सम्पूर्ण वृत्तान्त को सुनाकर नालीजङ्घ उससे कहता है कि आज से तुम्हीं इस अनाथ बालक के रक्षक हो।

मन में सहज ही यह प्रश्न उठता है कि एक अपरिचित व्यक्ति पर इतना अधिक विश्वास करने का क्या कारण था? इसका कारण यह हो सकता है कि वृद्ध व्यक्तियों की दृष्टि पारखी होती है। निस्सन्देह, विश्रुत के व्यवहार से नालीजङ्घ के मन में उसके प्रति अटूट विश्वास उत्पन्न हुआ होगा। अस्तु, विश्रुत ने अश्मकराज को नष्ट कर, भास्करवर्मा को पिता के पद पर प्रतिष्ठित करने की जो योजना बनाई थी, उसे वह नालीजङ्घ की सहायता से ही कार्यान्वित कर पाया। मित्रवर्मा की मृत्यु के बाद उसके अमात्य आर्यकेतु के मनोभावों को जानने और उसे अपने पक्ष में करने के लिए विश्रुत ने नालीजङ्घ की ही सहायता ली।

15.4.4 मंत्री वसुरक्षित

वसुरक्षित अनन्तवर्मा का आमात्य था। वह उसके पिता के समय से मन्त्री के रूप में कार्य कर रहा था। अतः उसके मन में राजा तथा राज्य के प्रति स्वाभाविक निष्ठा थी। अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म मद्यपान आदि में ही रत रहता था। वसुरक्षित एक प्रभावशाली वक्ता (प्रगल्लभ वाक्) था। मर्यादा का पालन करने वाला था। यद्यपि आयु में वह ज्येष्ठ था, परन्तु पद की दृष्टि से अनन्तवर्मा का स्थान ऊँचा था। अतः राज्य के हित की कामना से जब वह अनन्तवर्मा को उपदेश देने का निश्चय करता है, तो वह अपेक्षित मर्यादा का पालन करता है। उदाहरणस्वरूप वह उसे सबके सामने कुछ न कहकर एकान्त में उपदेश

देता है। अनन्तवर्मा आयु में मंत्री वसुरक्षित से छोटा है तथा उसके स्वामी पुण्यवर्मा का पुत्र है, अततः उसे स्नेहवश 'तात' कहकर सम्बोधित करता है। किसी को भी उपदेश देते समय, पहले उसके गुणों की प्रशंसा करना उपदेशक के प्रयोजन को सफल बनाता है। वसुरक्षित चाहता था कि अनन्तवर्मा राजनीति के महत्त्व को समझे और उसकी बातों का आत्मसात् करे इसलिए वह पहले उसके विद्यमान गुणों और उसकी रुचियों की प्रशंसा करता है फिर वह बड़ी चतुराई से विनम्र शब्दों में राजनीति सम्बन्धी उसकी न्यूनता का बोध कराता है। वह कहता है कि सभी कलाओं में निपुण होने पर भी आप की बुद्धि अग्नि में न तपाये गए सोने के समान अत्यधिक सुशोभित नहीं होती। राजनीति का ज्ञान रखने वाला राजा सदा सफल रहता है किन्तु उसके ज्ञान से रहित राजा चाहे कितना ही महान् क्यों न हो, वह जान नहीं पाता कि शत्रु किस प्रकार उसे अभिभूत करता जा रहा है। फलस्वरूप वह समय रहते प्रतीकार नहीं कर पाता। न ही वह साध्य और साधन का विभाजन कर सम्यक् रूप से व्यवहार कर पाता है। यानी वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि उसका लक्ष्य क्या है और उसकी प्राप्ति कैसे हो सकती है अथवा वह यह नहीं जान पाता कि कौन उसके विरुद्ध है और कौन उसके साथ है। शास्त्रविरुद्ध व्यवहार करने वाले को उसके कार्यों में बाधाएँ आती हैं और वह अपने तथा पराये के द्वारा अपमानित होता है। इस प्रकार तिरस्कृत होने वाला राजा प्रजा के हित के लिए कोई आज्ञा भी देता है, तो उसका कोई पालन नहीं करता। इस प्रकार प्रजा का योगक्षेम सिद्ध नहीं होता। राजा की आज्ञा न मानने वाली प्रजा स्वेच्छानुसार व्यवहार करते हुए सभी मर्यादाओं को दूषित कर देती है। यानी राजा प्रजा दोनों इस लोक में तो कष्ट और अपयश के भागी बनते ही हैं, परलोक में भी कोई सुख प्राप्त नहीं होता।

वसुरक्षित राजा से कहता है कि शास्त्ररूपी दीपक से देखे गए मार्ग से लोकयात्रा सुगम हो जाती है। राजनीति शास्त्र का ज्ञान राजा के लिए दिव्य चक्षु के समान है, जो बिना किसी बाधा के भूत, वर्तमान और भविष्य के गुप्त और परोक्ष विषयों को ग्रहण करने में समर्थ है। जो दिव्यचक्षु से रहित है अर्थात् जो राजनीति के ज्ञान से शून्य है, वह राजा विशाल और लम्बी आँखों के होते हुए भी नेत्रहीन के समान होता है। यानी जिस प्रकार एक नेत्रहीन व्यक्ति संसार में ठोकरें खाता है, उसी प्रकार राजनीति की गूढ़ बातों को न समझ पाने के कारण राजा अपने राज्य को सुचारु रूप से चलाने में स्वयं को असमर्थ पाता है।

इस प्रकार संक्षेप में राजा को राजनीतिक ज्ञान की आवश्यकता के विषय में बताकर वसुरक्षित राजा से अनुरोध करता है कि वह एक राजा के लिए बाह्य विषयों—नृत्य, गीत, वाद्य आदि से अपनी आसक्ति को हटाकर राजनीति में रुचि ले, क्योंकि वही उसकी कुल विद्या है। दण्डनीति का ज्ञान प्राप्त करने से और तदानुसार व्यवहार करने से उसकी शक्तियों में वृद्धि होगी। तब कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं करेगा और समुद्ररूपी मेखला वाली पृथिवी पर उसका एकछत्र राज्य होगा। राजा अनन्तवर्मा अपने वृद्ध मंत्री वसुरक्षित की बातों से सहमत होता है और वह कहता है कि गुरुतुल्य आपके द्वारा सम्यक् उपदेश दिया गया है। आज से मैं आपके उपदेश के अनुसार ही व्यवहार करूँगा।

15.4.5 सेवक विहारभद्र

विहारभद्र राजा के बाल्यकाल से ही उसका सेवक था। वह मन के भावों को जानने में कुशल तथा राजा का कृपापात्र था। नृत्य, गीत और वादन आदि में अत्यधिक निपुण

था। परस्त्रियों में रुचि रखने वाला था। वह चतुर और मुँहफट था। अनेक प्रकार के वक्र भाषणों में प्रवीण था। वह दूसरे के दोषों को ढूँढने में तत्पर, हँसाने वाला, परनिन्दा में आनन्दित होने वाला और दूसरों की चुगली करने में निपुण था। मन्त्रिमण्डल से भी घूस लेने वाला था। सारे दुष्टकर्मों का आचार्य और कामशास्त्री नौका का कर्णधार था। वसुरक्षित के चले जाने के बाद उसके साथ हुए वार्तालाप को जब राजा अनन्तवर्मा अन्तःपुर की स्त्रियों को बता रहा था, तो पास में बैठा हुआ विहारभद्र सारी बात सुन लेता है। वह परजीवी प्रकृति का पुरुष था। उसे चिन्ता होती है कि यदि राजा भोग–विलासों को छोड़कर राजनीति में रुचि लेने लगेगा, तो उसका क्या होगा? स्वार्थ से वशीभूत होकर वह राजा को विपरीत शिक्षा देने लगता है।

वह कहता है कि हे देव, यदि दैवकृपा से कोई ऐश्वर्य का पात्र बनता है तो धूर्त जन अनेक प्रकार के प्रलोभनों से दुःखी करते हुए अपने प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। जैसे–कुछ व्यक्ति मरने के बाद प्राप्त होने वाले विशिष्ट अभ्युदय की आशा मन में उत्पन्न कर, सिर को मुण्डवाकर, कुश की रस्सी से बाँधकर, मृगचर्म पहनाकर, मक्खन से मालिश कर, बिना भोजन के सुलाकर उसकी सारी सम्पत्ति हस्तगत कर लेते हैं। कुछ क्रूर पाखण्डी उनसे भी बढ़कर होते हैं। वे तो व्यक्ति से उसके पुत्र, पत्नी, शरीर और यहाँ तक कि प्राणों को भी छुड़वा देते हैं। यदि कोई बुद्धिमान् व्यक्ति इस मृगतृष्णा के लिए अपनी सम्पति का परित्याग नहीं करना चाहता तो अन्य धूर्तगण उसे घेर लेते हैं, उससे कहते है कि यदि हमारे द्वारा बताए हुए मार्ग पर चला जाय तो हम एक कौड़ी को एक लाख कार्षापण में बदल दें। बिना शस्त्र के सारे शत्रुओं को मरवा दें। एक अकेले व्यक्ति को भी चक्रवर्ती सम्राट बनवा दें। इस प्रकार अपनी चतुराई से वह उसे वशीभूत कर लेते हैं। विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि यदि उस धूर्त पाखण्डी की इन बड़ी–बड़ी लुभावनी बातों पर विश्वास करके कोई यह पूछता है कि आपका यह कौन–सा रास्ता है? तो उसको स्पष्ट करते हुए कहता है कि चार राज विद्याएँ है–त्रयी (तीनों वेद), वार्ता (कृषि और वाणिज्य से सम्बन्धित ज्ञान), आन्वीक्षिकी (तर्कशास्त्र) और दण्डनीति (अर्थशास्त्र)। उनमें से प्रथम तीनों बहुत विस्तृत और अल्पफलप्रदायिनी हैं। इसलिए उन्हें छोड़कर केवल दण्डनीति का ही अध्ययन करना चाहिए। आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए राजनीति के सभी सिद्धांतो को छह हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर दिया है। इसको पढ़कर और तदनुसार व्यवहार करने से उपर्युक्त सभी कार्यों की सिद्धि होती है। इस प्रकार विहारभद्र अनन्तवर्मा को चार प्रकार के राजविद्याओं और आचार्य चाणक्य द्वारा चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए षट्सहस्र श्लोकों में प्रणीत शास्त्र को पालन करने हेतु निषिद्ध बताकर उसे अनुचित एवं कुमार्गगामी बातों को कहता है।

वह भी उनकी आज्ञा मानकर उस शास्त्र को पढ़ता है और सुनता है। उसको पढ़ते हुए ही वह किस अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इतना ही नहीं इस शास्त्र को समझने के लिए अन्य सम्बद्ध वाक्यों का अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। राजनीति शास्त्र को पढ़ने से व्यक्ति का चिन्तन किस प्रकार प्रभावित होता है, इसका वर्णन करते हुए विहारभद्र कहता है कि इस शास्त्र को जानने वाला सर्वप्रथम अपनी पत्नी और पुत्र पर ही अविश्वास करने लगता है। अपनी उदरपूर्ति के लिए भी वह, इतने चावलों से इतना भात बनेगा और इतने भात को पकाने में इतना ईंधन लगेगा, इस प्रकार से गणना करने लगता है।

जागने के पश्चात् राजा धुले अथवा बिना धुले मुख से एक या आधा मुट्ठी अन्न पेट के अन्दर डालकर नगर (मुष्टि) और गाँव (अर्द्धमुष्टि) के आय की पड़ताल करके

समस्त आय और व्यय को दिन के पहले आठवें भाग में सुनता है। उसके सुनते हुए ही धूर्त अध्यक्ष गण दुगना धन हड़प कर लेते हैं। चाणक्य ने धनसंग्रह के चालीस उपाय बतलाए हैं, लेकिन वे धूर्त उन चालीस उपायों को हजारों प्रकार का बना लेते हैं। इस प्रकार वे राजा को ठगते है।

प्रजाजनों के रोज–रोज के झगड़े और एक दूसरे पर आरोप लगाकर चिल्लाना आदि को सुन–सुनकर राजा के कान मानो जल जाते है, जिसके कारण उसे बहुत कष्ट होता है। न्यायालय में राजा के साथ प्राड् नामक अधिकारी बैठते थे, जो वादी–प्रतिवादी से प्रश्न पूछकर फैसला देते। इन्हीं के फैसलों को राजा मान्यता देता था, परन्तु ये अधिकारी धन आदि लेकर अपनी इच्छा से किसी भी व्यक्ति के पक्ष में फैसला कर देते थे, लेकिन बदनामी राजा की होती थी। ये अधिकारी जिसे चाहते उसकी जीत करवा देते। राजा को कार्यों एवं योजनाओं के विषय में कर्मचारी उलटा–पुलटा समझाते थे अर्थात् जो हानिप्रद होता था, उसे लाभप्रद समझाते थे। राजा भोजन करने के बाद जब तक वह पच नहीं जाता था, उसे किसी के द्वारा भोजन में विष दिये जाने की आंशका बनी रहती थी–

यानैः शय्यासने पाने भोज्ये वस्त्रे विभूषणे।
सर्वत्रैवाप्रमत्तः स्याद् वर्जयेद् विषदूषितम्।।

इस प्रकार धूर्त अधिकारीगण येन–केन प्रकारेण राजा को अपने वश में किये ही रहते थे।

तीसरें आठवें भाग में राजा को स्नान एवं भोजन के लिए समय प्राप्त होता है। जब तक भोजन पूरी तरह पचता नहीं है, वह विष के भय से ग्रस्त रहता है।

चौथे आठवें भाग में सुवर्ण के लिए हाथ फैलाता हुआ ही उठ खड़ा होता है। पाँचवें अष्टम भाग में राजनीति सम्बन्धी मन्त्रणा से महान् कष्ट का अनुभव करता है। यहाँ भी मन्त्रीगण ऊपर से तो तटस्थ बने रहते हैं, किन्तु वस्तुतः एक दूसरे से मिले हुए होकर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए दोषों और गुणों को, दूतों और गुप्तचरों के सन्देशों को, सम्भव और असम्भव को तथा स्थान, समय और कार्य की स्थितियों को अपनी इच्छा से बदलते हुए अपने राज्य के और शत्रुपक्ष के मित्रवर्ग से धन प्राप्त करते हैं। अपने राज्य में और सीमा पर गुप्तरूप से विवादों को उत्पन्न करके प्रकट रूप में उनको शान्त सा करते हुए स्वामी को वश में कर लेते हैं। छठा–आठवा भाग इच्छानुसार मनोविनोद अथवा मन्त्रणा के लिए निश्चित होता है। इतना ही समय उसे विनोद के लिए प्राप्त होता है। सातवें भाग में उसे अपनी चार अंगों वाली सेना के निरीक्षण का कष्ट उठाना पड़ता है। आठवें में इसे सेनापति के साथ पराक्रम सम्बन्धी चिन्ता का दुःख होता है।

विहारभद्र अपनी चिकनी–चुपड़ी बातों के माध्यम से शास्त्र द्वारा बताये गये राजा के प्रतिदिन एवं प्रतिरात्रि के आठों प्रहरों के कार्य को स्पष्ट करते हुए उसे न पालन करने हेतु प्रेरित करता है।

दिन के समान रात्रि के भी आठ भाग माने गए हैं। उनके शास्त्रकारों द्वारा राजा के लिए निर्धारित किए गए क्रिया–कलापों का वर्णन विहारभद्र राजा से करता है। वह कहता है कि शास्त्रज्ञों के अनुसार रात्रि के प्रथम (आठवें) भाग में गुप्तचरों से मिलना चाहिए और उनके माध्यम से अत्यन्त क्रूर, शस्त्र, अग्नि और विष का प्रयोग करने वाले लोगों को नियुक्त करना चाहिए। दूसरे भाग में भोजन के पश्चात् वेदपाठी ब्राह्मण के

समान शास्त्र का स्वाध्याय करना चाहिए। तीसरे भाग में तूर्यघोष के साथ सोया हुआ चौथे और पाँचवें (भागों) में सोए।

एक राजा की स्थिति पर दुःख प्रकट करता हुआ विहारभद्र कहता है कि निरन्तर चिन्ता के कष्ट से व्याकुल मन वाले इस बेचारे को निद्रासुख कैसे मिल सकता हैं। फिर रात्रि के छठे भाग में शास्त्र और कर्तव्य की चिन्ता प्रारम्भ हो जाती है। सातवें भाग में मन्त्रचिन्तन और दूतों को भेजने का कार्य होता है और दूत जो हैं वह दोनों पक्षों से मधुर और अनुकूल बातें कर धन प्राप्त करता है। उस धन को वह शुल्क की बाधा से रहित मार्गों पर व्यापार के द्वारा बढ़ाता हुआ अविद्यमान कार्य को भी अल्प प्रयास से उत्पन्न करके बढ़ाते रहते हैं। रात्रि के आठवें भाग में पुरोहित आदि उसके पास आकर कहते हैं कि आज बुरा स्वप्न देखा है। ग्रहों की स्थिति प्रतिकूल है। शकुन बुरे हैं। इसके लिए शान्तिकर्म करना चाहिए। इसमें सभी पात्र यदि सोने के हों तो परिणाम अत्यन्त उत्तम होगा।

विहारभद्र सेवक होते हुए राजा अनन्तवर्मा से यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में बताता है एवं शास्त्र से क्या प्रयोजन है अर्थात् शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है ,इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग कीजिए। उस यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में वे राजा से कहते हैं कि ये ब्रह्मा के समान हैं। इनके द्वारा किया गया स्वस्ति पाठ अत्यधिक कल्याणकारी होता है। ये घोर दरिद्रता से पीड़ित और बहुत अधिक सन्तानों वाले हैं। यज्ञ को करने में इन तेजस्वी ब्राह्मणों ने आज तक किसी से दान नहीं लिया है। इनको दिया गया दान स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला और अनिष्ट का नाश करने वाला होता है। इस प्रकार की बातों से राजा को अभिभूत कर उन ब्राह्मणों को खूब दान–दक्षिणा दिलवाते हैं और गुप्त रूप से उनसे अपना हिस्सा लेते हैं। विहारभद्र अनन्तवर्मा से कहता है कि इस प्रकार दिन–रात थोड़े से भी सुख से रहित और परिश्रम की अधिकता से निरन्तर पीड़ित होकर समय बिताते राजा की चक्रवर्तिता तो रही, अपने राज्य मण्डलमात्र की रक्षा करना भी कठिन हो जाता है। इसका कारण वह बतलाता है कि शास्त्रज्ञों की अनुमति से वह जो कुछ दान देता है, जो भी सम्मान देता है, जो भी प्रिय बोलता है, उसकी उन सभी क्रियाओं को लोग सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार अविश्वास राजलक्ष्मी के अभाव का कारण बनता है। पूर्ण चतुराई से वह राजा को समझाता है कि लोकव्यवहार के लिए जितने ज्ञान की आवश्यकता होती है, उसे तो मनुष्य संसार में स्वयं ही अनुभव से सीख लेता है, इसके लिए शास्त्रों के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं है। एक अबोध शिशु भी विभिन्न उपायों से माता के स्तनपान की अभिलाषा को प्रकट करता है। अतः वह राजा को परामर्श देता है कि वह राजनीति के कारण होने वाले महान् कष्ट को छोड़कर इच्छानुसार इन्द्रियसुखों का भोग करे।

विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि जो भी इन्द्रियों को जीतने, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि अरिषड्वर्ग को त्यागने, अपने और शत्रुपक्ष के लोगों में निरन्तर सामादि उपायों का प्रयोग करने और सन्धि–विग्रह की चिन्ता के द्वारा समय बिताने और थोड़े से भी सुख का अवसर न देने का उपदेश देते हैं, मन्त्रीरूपी उन बगुलों के द्वारा आप से चोरी से अर्जित किया गया धन दासियों के घरों में भोगा जाता है।

राजनीतिशास्त्रकारों का उपहास करते हुए वह कहता है कि राजनीति के क्रूर सिद्धांतो का प्रतिपादन करने वाले ये शुक्र, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र आदि बेचारे हैं

कौन? क्या इन्होंने स्वयं अरिषड्वर्ग को जीता था अथवा क्या उन्होंने शास्त्रों के अनुसार व्यवहार किया था। उनके द्वारा भी प्रारम्भ किए गए कार्यों में सफलता और असफलता देखी गई थी। राजनीति के सिद्धांतों को जानने वाले बहुत से लोग, इनके ज्ञान से शून्य लोगों के द्वारा ठगे गए हैं।

पुनः वह अनन्तवर्मा को भोगोन्मुखी बनाये रखने के लिए प्रशंसा करते हुए वह कहता है कि आप सम्पूर्ण लोक में सम्माननीय वंश में उत्पन्न हुए हैं, युवा हैं, सुन्दर शरीर और अपरिमित ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं। इन सबको सारे अविश्वास के हेतु और सुखों के उपभोग में बाधा उत्पन्न करने वाले, अनेक विकल्पों के होने से सभी कार्यों में संशय युक्त तन्त्रावाप (स्व और परराष्ट्र की चिन्ता) के द्वारा व्यर्थ मत कीजिए।

राजा को आश्वस्त करने की दृष्टि से वह कहता है कि आपके पास दस हजार हाथी, तीन लाख घोड़े और असंख्य पैदल सैनिक हैं। आपका कोश स्वर्ण और रत्नों से भरा हुआ है। यह सारा प्राणीलोक अगर हजार युगों तक भी उसका भोग करता रहे तो समाप्त नहीं होगा। फिर वह राजा से कहता है कि मनुष्य का जीवन बहुत छोटा होता है, उससे भी भोग के योग्य आयु (युवावस्था) बहुत कम होती है। वे मूर्ख होते हैं जो आजीवन केवल धन अर्जित करते रहते हैं। उसका भोग करने की लेशमात्र भी इच्छा नहीं करते अर्थात् कहने का आशय यह है कि नीतिशास्त्रकारों के द्वारा प्रणीत सभी नियम अनुचित एवं व्यर्थ है उसका पालन करने से कोई लाभ नहीं होता है बल्कि सदाचारी एवं नियम पालन करने वाला व्यक्ति धूर्त मंत्रियों एवं दरबारियों के द्वारा ढगा जाता है इसलिए हे महाराज! आप भोग विलास करने योग्य चीजों का भोग करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाइये। इस प्रकार वह राजा को उचित मार्ग से अनुचित मार्ग की तरफ प्रेरित करता हैं।

विहारभद्र राजा को परामर्श देता है कि–हे राजन! अनन्तवर्मा आप भी राज्य के राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक बातों पर ध्यान न देकर राज्य की रमणीय वस्तुओं का भोग कीजिए अर्थात् वह कहना चाहता है कि वह राज्य का भार विश्वस्त लोगों पर सौंप दे और अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ रमण करते हुए ऋतुओं के अनुसार गीत–संगीत और (मद्य) पान की सभाओं का आयोजन करते हुए सुख का अनुभव करे, यह कहकर वह साष्टांग भूमि पर लेट गया। राजा तथा अन्तःपुर की स्त्रियाँ उसकी इस चेष्टा पर हँस पड़ते है। राजा की प्रकृति ही भोगपरक थी। अतः वह विहारभद्र की बातों को अपने लिए हितकारी मानते हुए उसे अपना गुरु घोषित करता है। वह उसके मतानुसार व्यवहार करते हुए राजनीति तथा वसुरक्षित, दोनों की अवहेलना करते लगता है। इस प्रकार आप राज्य पर किसी भी प्रकार का ध्यान न दीजिए।

विहारभद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश को सुनकर थोड़ी मुस्कुराहट के साथ उसको अपना गुरु मानकर और उसे महत्व देकर जमीन से उठाया और भोग–विलास के रस में डूब गया तथा वृद्ध मंत्री वसुरक्षित का अपमान करने लगा।

15.5 विश्रुतचरितम् का वैशिष्ट्य

दण्डी का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उन्होंने समाज के सभी वर्गों के पात्रों को लिया हैं। इसमें राजा, राजकुमार, ब्राह्मण, भिक्षुक, चोर, राजकुमारियाँ, वेश्याएँ, दम्भी और

पाखंडी सभी सम्मिलित है। दण्डी ने ढूँढ–ढूँढकर सामाजिक बुराइयों का उद्घाटन किया है। दण्डी को स्वच्छ समाज से प्रेम है, दम्भी और पाखण्डियों से नहीं। अतः कामातुर ऋषि मरीचि, कुलटा पत्नी धूमिनी, परस्त्रीरत कलहकण्टक, ऋषिमनोहारिणी काममंजरी, कार्यदक्ष उपहारवर्मा, योग्य अमात्य वसुरक्षित, धूर्ताधिराज विहारभद्र आदि के चरित्र–चित्रण जीवन की वास्तविकता का वर्णन करते है। भले और बुरे सभी कोटि के पात्र है। उनमें मानवोचित हर्ष–शोक, सुख–दुःख, राग–द्वेष, प्रेम–घृणा, आशा–निराशा व्याप्त है।

दण्डी आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी और व्यवहारवादी है। दशकुमारचरित में ईर्ष्या, घृणा, द्वेष, हिंसा, व्यभिचार बलात्कार, अनैतिकता आदि सभी का वर्णन है। इसके वर्णन के द्वारा दण्डी का उद्देश्य है–समाज की बुराइयों का नग्नचित्र प्रस्तुत करके जनता को सावधान करना, दंभी, पांखण्डी, अभिचार रत तथा स्वार्थपरायण व्यक्तियों से सतत जागरुक रहने की शिक्षा देना और स्वस्थ परम्पराओं को आश्रय देना। दण्डी ने केवल सैद्धान्तिक शिक्षा देना और स्वस्थ परम्पराओं को आश्रय देना। दण्डी ने केवल सैद्धान्तिक शिक्षा न देकर व्यावहारिक शिक्षा दी है। व्यवहार कुशलता से ही जीवन सुखी बन सकता है, यह दण्डी का लक्ष्य है। दण्डी को असंयत, अनैतिक आदि कहना तथ्य से परे है। दण्डी निर्भीक सुधारवादी, क्रान्तिकारी और व्यवहार कुशल कवि है।

अष्टम उच्छवास विश्रुतचरितम् में मन्त्री वसुरक्षित ने राजकुमार अनन्तवर्मा को जो उपदेश दिया है, उसकी तुलना बाण के शुकनासोपदेश से की जा सकती है। दण्डी का उपदेश अत्यन्त युक्तियुक्त और प्रभावोत्पादक है।

'तात! सर्वैवात्मसम्पदभिजनात्प्रभृत्यन्यूनैवात्रभवति लक्ष्यते। बुद्धिश्च निसर्गपट्वी, कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राप्तविस्तरा तवेतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते। तथाऽप्यसावप्रतिपद्यात्मसंस्कारमर्थशास्त्रेषु, अनग्निसंशोधितेव हेमजातिर्नातिभाति बुद्धिः। बुद्धिहीनो हि भूभृदत्युच्छ्रितोऽपि परेरध्यारुह्यमाणमात्मानं न चेतयते। न च शक्तः साध्यं साधनं वा विभज्य वर्तितुम्। अयथावृत्तश्च कर्मसु प्रतिहन्यमानः स्वैः परैश्च परिभूयते। न चावज्ञातस्याज्ञा प्रभवति प्रजानां योगक्षेमाराधनाय। अतिक्रान्तशासनाश्च प्रजा यत्किंचनवादिन्यो यथाकथांचिद्वर्तिन्यः सर्वाः स्थितः संकिरेयुः। निर्मर्यादश्च लोको लोकादितोऽमुतश्च स्वामिनामात्मानं च भ्रंशयते। आगम दीपदृष्टेन खल्वध्वना सुखेन वर्तते लोकयात्रा। दिव्यं हि चक्षुर्भूतभवद्भविष्यत्सु व्यवहितविप्रकृष्टादिषु च विषयेषु शास्त्रं नामाप्रतिहतवृत्ति। तेन हीनः सतोरप्यायतविशालयोर्लोचनयोरन्ध एव जन्तुरर्थदर्शनेष्वसामर्थ्यात्। अतो विहाय बाह्यविद्यास्वभिषङ्गमागमय दण्डनीतिं कुलविद्यां। तदर्थानुष्ठेन चावर्जितशक्तिसिद्धिरस्खलितशासनः शाधि चिरमुदधिमेखलामुर्वीम्' इति।

हे तात! (प्रियवर)! आप में अपने वंश (खानदान) के अनुरूप सभी संपदाएँ (गुण) अत्यधिक रूप से दिखाइ पड़ती है। नृत्य–गीतादि कलाओं में, चित्र (निर्माण) में तथा शल्य कला में स्वभाव से ही तीक्ष्ण आपकी बुद्धि और लोगों की अपेक्षा अधिक विशिष्ट है तथापि (आपकी बुद्धि) अर्थशास्त्र (राजनीति) में आत्मसंस्कार न पाकर (शिक्षा न पाने के कारण) न तपाये हुए स्वर्ण के समान, अधिक शोभा नहीं देती। बुद्धिरहित राजा अत्युन्नत होने पर भी शत्रु द्वारा आक्रमण किये जाते हुए भी अपने को समझने में समर्थ नहीं होता है। वह साध्य तथा साधन का (समुचित) विभाग कर व्यवहार करने में भी समर्थ नहीं होता। अनुचित रीति से व्यवहार करने वाला राजा (अपने) कार्यों में

असफल होता हुआ, अपने तथा अन्य लोगों के द्वारा तिरस्कृत हुआ करता है। उस अवज्ञात (तिरस्कृत) राजा की आज्ञा, प्रजा के योग (अप्राप्त का प्राप्त करना) तथा क्षेम (प्राप्त की सुरक्षा) साधने में समर्थ नहीं होती। (फिर तो) शासन का उल्लंघन (अतिक्रमण) करने वाली प्रजाएँ अपनी इच्छानुसार जो चाहती है वही कहने लगा करती हैं, अपनी इच्छानुसार व्यवहार करने लगा करती हैं तथा अन्त में सम्पूर्ण स्थिति (मर्यादा) को छिन्न–भिन्न (तितर–बितर) कर देती हैं। (पुनः) ऐसी मर्यादाहीन प्रजाएँ इस लोक तथा परलोक दोनों से अपने को तथा (अपने) स्वामी को भ्रष्ट कर देती है। लोकयात्रा (जीवन यात्रा) (तो) शास्त्र रूपी दीपक से देखे हुए मार्ग (पर चलने) से (ही) सुखपूर्वक चलती है। वह रहने वाले एवं दूरस्थ विषयों में भी अप्रतिहत गति से पहुँच जाया करती है, कहीं भी रुकती नहीं है। उस (शास्त्र ज्ञान) से रहित प्राणी लम्बे–चौड़े तथा विशाल नेत्रों के रखते होने पर भी अर्थदर्शन (राजनीति) में सामर्थ्य (ज्ञान अथवा योग्यता) न होने के कारण अंधा ही हुआ करता है। अतः आप बाह्य विद्याओं की आसक्ति (रुचि) का त्याग कर अपनी वंश परम्परा की विद्या (दण्डनीति) की ओर ध्यान लगायें तथा सीखें। उसके अर्थों (नियमों) के अनुसार व्यवहार करने से (व्यवहार करके) शक्तिसिद्धि प्राप्त कर बाधाओं से रहित शासन वाला बनकर, चिरकाल तक, समुद्ररूपी करधनी वाली (अर्थात् समुद्र से घिरी हुई) पृथ्वी पर शासन करो।

दण्डी ने इसके बाद एक वेश्या लम्पट विहारभद्र नामक सेवक के द्वारा राजकुमार को बड़े तार्किक ढंग से बहकाने का वर्णन किया हैं। वह राजा को विषयभोग आदि का महत्त्व बताकर पथभ्रष्ट करता है। यह वर्णन भी कवि की उर्वर कल्पना शक्ति का द्योतक है।

देव, दैवानुग्रहेण यदि कश्चिद्भाजनं भवति विभूतेः, तमकस्मादुच्चावचैरुपप्रलोभनैः कदर्थयन्तः स्वार्थं साधयन्ति धूर्ताः तथाहि केचित्प्रेत्य किल लभ्यैरभ्युदयातिशयैराशामुत्पाद्य, मुण्डयित्वा शिरः, बद्ध्वा दर्भररज्जुभिः, अजिनेनाच्छाद्य, नवनीतेनोपलिप्य, अनशनं च शाययित्वा, सर्वस्वं स्वीकरिष्यन्ति। तेभ्योऽपि घोरतराः पाषण्डिनः पुत्रदारशरीरजीवितान्यपि मोचयन्ति। यदि कश्चिद्त्पटुजातीयो नास्यै मृगतृष्णिकायै हस्तगतं त्युक्तमिच्छेत्, तमन्ये परिवार्याहुः–एकामपि काकिणीं कार्षापणलक्षमापादयेम, शस्त्रादृते सर्वशत्रून् घातयेम, एकशरीरणमाजमपि मर्त्यं चक्रवर्तिनं विदधीमहि, यद्यस्मदुद्दिष्टेन मार्गेणाचर्यते, इति।

इस प्रकार दण्डी का चरित्र–चित्रण अत्यन्त सजीव तथा विशद् है। उनके सभी पात्र वास्तविक से प्रतीत होते है। समाज के उच्च तथा निम्न वर्गों का वे जीता–जागता चित्र उपस्थित कर देते है। उनके 'दशकुमारचरितम्' से तत्कालीन रीति–रिवाजों का भी परिचय प्राप्त होता है। उनका रचना–कौशल भी देखने योग्य ही है। कथानक की रोचकता में वृद्धि करने के लिए दण्डी यत्र–तत्र शिष्ट हास्य, मधुर व्यंग्य तथा गम्भीर वर्णन का आश्रय ले लेते हैं। यदि कहीं पर वर्णनों का विस्तार मिलता है तो कहीं–कहीं लघु कथाएँ भी उपलब्ध होती हैं। कथाओं का क्रम प्रशंसा के योग्य है। मुख्य कथा के प्रवाह में अवान्तर कथाओं के आ जाने से किसी प्रकार गति–अवरोध उत्पन्न नहीं होता है। व्याकरण की दृष्टि से भी 'दशकुमारचरितम्' पूर्णतया निर्दोष है। इस भाँति सजीव चरित्र–चित्रण, स्वाभाविक शैली, शिष्ट हास, रसानुकूल शब्द विन्यास, बुद्धिचातुर्य, यथार्थ एवं आदर्श का सुमधुर सामंजस्य इत्यादि अनेक विशेषताओं से सुसज्जित 'दशकुमारचरितम्' संस्कृत गद्य साहित्य में अपना एक अनूठा तथा विशिष्ट स्थान रखता है।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें

   I. दण्डी का जन्म कहाँ हुआ? (विदर्भ/कश्मीर)

   II. दण्डी के पिता का क्या नाम है? (वीरदत्त/भारवि)

   III. दण्डी का समय क्या है? (प्रथम शताब्दी/सप्तम् शताब्दी)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   I. दण्डी के माता का नाम ..... हैं। (गौरी देवी/सीता देवी)

   II. दण्डी की रचना ..... हैं। (कादम्बरी कथामुखम्/ दशकुमारचरितम्)

   III. दशकुमारचरितम्..... विभक्त हैं। (सर्गों में/उच्छावासों में)

बोध प्रश्न–2

1. दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. मंत्री वसुरक्षित का चरित्र–चित्रण बताइये।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. दण्डी की कथावस्तु स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

अभ्यास प्रश्न 1

1. दण्डी के कथावस्तु का वैशिष्ट्य स्पष्ट कीजिए।

15.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना की–

आचार्य दण्डी के जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व के अर्न्तगत दण्डी को दाक्षिणात्य और सम्भवतः

विदर्भदेशीय (बरार निवासी) थे। इनका समय छठी शताब्दी के आरम्भ से लेकर सातवीं शती के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है। ये आचार्य भारवि के प्रपौत्र थे। इनके पितामह का नाम मनोरथ तथा पिता का नाम वीरदत्त था। इनकी माता का नाम गौरी था। इनके द्वारा प्रणीत तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते है–काव्यादर्श, दशकुमारचरितम् एवं अवन्तिसुन्दरी कथा का ज्ञान प्राप्त किया।

- विश्रुतचरितम् की कथावस्तु के अर्न्तगत यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि यह एक घटना प्रधान काव्य है। दण्डी ने अपनी कल्पनाशीलता से इन घटनाओं को रोमांचक एवं रमणीय बना दिया है। उसमें स्वाभाविकता की उपस्थिति के कारण पाठक जैसे अभिभूत हो जाता है। यह दण्डी के काव्य कौशल का ही परिणाम है कि विषयान्तरों वर्णन से कथा प्रवाह अवरुद्ध नहीं होता। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि किसी भी घटना का वर्णन करते हुए दण्डी मानों उसका चित्र खींच देते हैं।
- विश्रुतचरितम् में वर्णित पात्र चित्रण के अर्न्तगत दण्डी के पात्रों का चित्रण में उनके पात्र सजीव एवं वास्तविक प्रतीत होते है। इसमें समाज के सभी वर्गों का चित्रण किया गया है। उनके पात्र मानव–स्वभाव के विविध रूपों का प्रतिनिधित्व करते है। इसमें मंत्री वसुरक्षित की विवशता, सेवक विहारभद्र की कुटिलता, नालीजंघ की कर्तव्य परायणता, राजा अनन्तवर्मा के कर्तव्यहीनता का परिचय ज्ञान प्राप्त हुआ।
- विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य के अर्न्तगत दण्डी ने अपने प्रखर तथा व्यावहारिक दृष्टिकोण से अपने आस–पास घट रहे विषय को वास्तविक रूप से ग्रहण कर काव्यात्मक परिवेश में प्रस्तुत किया। इसके छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग किया है जो ओजगु ण प्रधान, मनोहर एवं सुस्पष्ट है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सशक्त अभिव्यक्ति, चित्ताकर्षक, शब्दविन्यास एवं कल्पना की मौलिकता ने इसको समृद्ध बना दिया है।

15.7 शब्दावली

- अभिव्यक्ति – प्रकटीकरण
- चित्ताकर्षक – चित्त को सुन्दर लगने वाला
- शब्दविन्यास – शब्द की संरचना
- काव्यात्मक – रस एवं अलंकार से युक्त
- कुटिलता – दुष्टता
- कर्तव्यपरायणता – कार्य करने में प्रवीण
- कर्तव्यहीनता – कार्य करने में असमर्थ
- रोमांचक – हर्ष से युक्त

15.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार, डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

15.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. **(i) विदर्भ (ii) वीरदत्त (iii) सप्तम् शताब्दी**
2. **(i) गौरी देवी (ii) दशकुमारचरितम् (iii) उच्छवासो में**

बोध प्रश्न 2

1 आचार्य दण्डी के जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व के अर्न्तगत दण्डी को दाक्षिणात्य और सम्भवतः विदर्भदेशीय (बरार निवासी) थे। इनका समय छठी शताब्दी के आरम्भ से लेकर सातवीं शती के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है। ये आचार्य भारवि के प्रपौत्र थे। इनके पितामह का नाम मनोरथ तथा पिता का नाम वीरदत्त था। इनकी माता का नाम गौरी था। इनके द्वारा प्रणीत तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते है–काव्यादर्श, दशकुमारचरितम् एवं अवन्तिसुन्दरी कथा

2 वसुरक्षित अनन्तवर्मा का आमात्य था। वह उसके पिता के समय से मन्त्री के रूप में कार्य कर रहा था। अतः उसके मन में राजा तथा राज्य के प्रति स्वाभाविक निष्ठा थी। अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म मद्यपान आदि में रहता था। वसुरक्षित एक प्रभावशाली वक्ता (प्रगल्लभ वाक्) था। मर्यादा का पालन करने वाला था। यद्यपि आयु में वह ज्येष्ठ था, परन्तु पद की दृष्टि से अनन्तवर्मा का स्थान ऊँचा था। अतः राज्य के हित की कामना से जब वह अनन्तवर्मा को उपदेश देने का निश्चय करता है, तो वह अपेक्षित मर्यादा का पालन करता है। उदाहरणस्वरूप वह उसे सबके सामने कुछ न कहकर एकान्त में उपदेश देता है। अनन्तवर्मा आयु में मंत्री वसुरक्षित से छोटा है तथा उसके स्वामी पुण्यवर्मा का पुत्र है, अततः उसे स्नेहवश 'तात' कहकर सम्बोधित करता है।

3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु के अर्न्तगत यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि यह एक घटना प्रधान काव्य है। दण्डी ने अपनी कल्पनाशील से इन घटनाओं को रोमांचक एवं रमणीय बना दिया है। उसमें स्वाभाविकता की उपस्थिति के कारण पाठक जैसे अभिभूत हो जाता है। यह दण्डी के काव्य कौशल का ही परिणाम है कि विषयान्तरों वर्णन से कथा प्रवाह अवरुद्ध नहीं होता। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि किसी भी घटना का वर्णन करते हुए दण्डी मानों उसका चित्र खींच देते हैं।

अभ्यास प्रश्न

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।